दैनिक जागरण

अंतरात्मा के अनुशासन से विचार निर्मल हो जाते हैं

अमेरिका की मनमानी

अमेरिका ने भारत समेत कई अन्य देशों को ईरान से तेल खरीदने के लिए जो रियायत दी थी उसे खत्म करने का फैसला करके अपनी मनमानी का ही परिचय दिया है। इस पर हैरत नहीं कि अमेरिकी की ओर से इस रियायत को खत्म करने की घोषणा होते ही अंतरराष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल के मूल्य बढ़ने शुरू हो गए। यदि कच्चे तेल के दाम बढ़ने का सिलसिला कायम रहा हो तो देश में पेट्रोलियम पदार्थ महंगे हो सकते हैं। कहना कठिन है कि ऐसी नौबत आएगी या नहीं, लेकिन यह अजीब है कि कांग्रेस ने आनन-फानन इस नतीजे पर पहुंचना जरूरी समझा कि 23 मई की शाम यानी चुनाव परिणाम आते ही पेट्रोल-डीजल की कीमतें पांच से दस रुपये तक बढ़ाने की तैयारी कर ली गई है। पता नहीं कांग्रेस ने यह निष्कर्ष कैसे निकाल लिया? जो भी हो, अगर अंतरराष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल के दाम एक सीमा से अधिक बढ़ते हैं तो उसका बोझ आम जनता पर भी आएगा, लेकिन आखिर इसका क्या मतलब कि चुनावी लाभ के लिए जनता के समक्ष एक डरावनी तस्वीर पेश की जाए? सवाल यह भी है कि क्या अंतरराष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल के दाम स्थिर रखना मोदी सरकार की जिम्मेदारी है? क्या मनमोहन सरकार के समय भारत की सहमति से ही कच्चे तेल के दाम घटते-बढ़ते थे? नाजुक अंतरराष्ट्रीय मसलों पर वैसी सस्ती राजनीति करने का कोई मतलब नहीं जैसी कांग्रेस करती दिख रही है। बेहतर होता कि कांग्रेस के नेता केवल यहीं तक सीमित रहते कि भारत को अमेरिकी फैसले के खिलाफ आवाज उठानी चाहिए।

फिलहाल यह कहना कठिन है कि ईरान से तेल खरीदने पर अमेरिकी रोक के क्या परिणाम सामने आते हैं, लेकिन इतना तो है ही कि इससे भारत को कुछ न कुछ परेशानी उठानी पड़ सकती है। हालांकि पेट्रोलियम मंत्री का कहना है कि भारत अन्य स्रोतों से अपनी जरूरत का तेल हासिल करने में समर्थ रहेगा, लेकिन अगर अमेरिकी प्रतिबंध के चलते भारत को महंगा तेल खरीदना पड़ता है तो इससे देश की अर्थव्यवस्था पर असर पड़ सकता है। ऐसा ही असर उन अन्य देशों की अर्थव्यवस्था पर भी पड़ सकता है जो ईरान से तेल खरीद रहे थे। बेहतर हो कि ये सभी देश जर्मनी और अन्य यूरोपीय देशों के साथ मिलकर अमेरिकी मनमानी का मुखर होकर विरोध करें। आखिर अमेरिका को यह इजाजत कैसे दी जा सकती है कि वह ईरान को दंडित करने के फेर में विश्व अर्थव्यवस्था को चोट पहुंचाने का काम करे? यह सही है कि ईरान विश्व शांति के अनुरूप कदम नहीं उठा रहा है, लेकिन आखिर इसकी क्या गारंटी उसके तेल निर्यात पर रोक लगाने से वह सही रास्ते पर आ जाएगा? अगर ऐसी कोई रोक लगानी ही है तो फिर वह विश्व समुदाय यानी संयुक्त राष्ट्र की ओर से लगाई जानी चाहिए और साथ ही यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि इससे विश्व अर्थव्यवस्था के समक्ष अनावश्यक संकट न पैदा हो। ऐसा लगता है कि अमेरिका यह समझने को तैयार नहीं कि वह पश्चिम एशिया में नए सिरे से अस्थिरता को बढ़ावा देने के साथ अपने मित्र देशों को मुश्किल में डाल रहा है।

शहरों की बदहाली

उत्तराखंड में शहरों की बदहाली अब चिंता के साथ चिंतन का विषय भी बन गई है। बढ़ते जनसंख्या दबाव और अनियोजित विकास ने स्थिति को और भी जटिल बना दिया है। पलायन आयोग की रिपोर्ट के अनुसार पहाड़ खाली हो रहे हैं और आबादी का रुख देहरादून, हरिद्वार, ऊधमसिंहनगर जैसे इलाकों की ओर हो गया है। इतना ही नहीं, बाहरी प्रदेशों से आने वाले लोगों की संख्या भी खासी बड़ी है। ऐसे में जिन एजेंसियों पर व्यवस्थित विकास की जिम्मेदारी है, उन्होंने आंखें बंद की हुई हैं। इन हालात में नतीजा क्या होगा, बताने की आवश्यकता नहीं है। राजधानी देहरादून इसका सबसे बेहतर उदाहरण है। जिस मास्टर प्लान को शहर में वर्ष 2000-2001 में लागू कर दिया जाना चाहिए था, उस पर 2005 में कार्य शुरू किया गया और नवंबर 2013 में लागू किया जा सका। जाहिर है इससे मास्टर प्लान की मूल भावना ही खत्म हो गई। इन 13 वर्षों में देहरादून का भूगोल बदल गया अथवा बदल डाला गया। शहर में नदी हों, नाले, पार्क अथवा फुटपाथ, आज सब कब्जों की भेंट चढ़ चुके हैं। वर्ष 2013 में जब मास्टर प्लान लागू किया गया तो उसमें भी हजारों बीघा वाले 23 से अधिक कृषि क्षेत्रों को आवासीय में परिवर्तित कर दिया गया। बड़े पैमाने पर भूमाफिया व प्रॉपर्टी डीलरों ने प्लॉटिंग कर भूखंडों को बेच डाला। दून के तमाम बाहरी इलाकों के साथ ही अभी भी कारगी, बंजारावाला, मोथरोवाला, दूधली, शिमला बाईपास रोड के क्षेत्रों में बची खुची कृषि, सार्वजनिक, हरित श्रेणी की जमीनों पर प्लॉटिंग कर उन्हें बेचा जा रहा है। सवाल यह है कि मास्टर प्लान लागू करने में एक दशक की अवधि क्यों लगी। क्या यह सामान्य प्रशासनिक लापरवाही थी या माफिया तंत्र का प्रभाव। सवाल यह भी है कि कोई भी मास्टर प्लान एक निर्धारित समय के लिए तैयार किया जाता है, यह 13 साल यूं ही गुजर जाएं तो उस प्लान का शहर को क्या लाभ मिलेगा। यह विडंबना सिर्फ राजधानी देहरादून की ही नहीं है, हरिद्वार, ऊधमसिंहनगर, हल्द्वानी और पर्वतीय क्षेत्रों के कई शहर ऐसी ही समस्या से जूझ रहे हैं। ये समस्याएं साधारण नहीं हैं, इनके पीछे सियासत भी गुल खिलाती रही है। नदी-नालों, पार्क और सरकारी जमीनों पर उगाई गईं बस्तियां सियासत का ही नतीजा हैं।

आतंक की खतरनाक आहट

एमजे अकबर

श्रीलंका में हुई भीषण त्रासदी को कम करके आंके बिना ही इस बात का उल्लेख करना जरूरी हो जाता है कि भारत भी निश्चित रूप से इन आतंकियों के निशाने पर था

जब तक हम सही सवाल नहीं करेंगे तब तक हमें उनके जवाब भी नहीं मिल पाएंगे। जब तक हम यह नहीं सीखते कि तथ्यों का सामना कैसे किया जाए तब तक सच्चाई को भी भलीभांति नहीं समझ पाएंगे। हम आतंक के साथ बड़े-बड़े विशेषण लगाकर उस पर चिंता जताकर ही उसके खतरे की अनदेखी नहीं कर सकते। इस मामले में मैं एक मिसाल देता हूं जो मौजूदा माहौल में काफी प्रासंगिक है। अक्सर हम किसी भी बर्बर कृत्य को नादानी समझकर उसके निर्मम प्रभाव को कम कर देते हैं। इसे लेकर कुछ बातें एकदम स्पष्ट कर देता हूं। श्रीलंका में रविवार को जो वीभत्स आतंकी हमला हुआ उसे केवल 'नादानी' कहकर ही नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। असल में यह उन घिनौनी ताकतों का कृत्य था जिन्हें भलीभांति मालूम था कि वे क्या करने जा रहे हैं। शुरुआती रपटें यही संकेत कर रही हैं कि नेशनल तौहीद जमात नाम का एक संगठन इसके लिए जिम्मेदार है। उसने प्रार्थना करने आए मासूम ईसाइयों के नरसंहार की योजना पूरी सावधानी के साथ बनाई और उसे ऐसी निर्मम मंशा के साथ अंजाम दिया ताकि इसमें अधिक से अधिक लोगों को मौत के घाट उतारा जा सके।

नेशनल तौहीद जमात का ताल्लुक मालदीव, बांग्लादेश और पाकिस्तानी संगठनों से है। वहीं कुछ और कुछ बड़े आतंकी समूहों से भी उसके तार जुड़े हैं। इनमें इस्लामिक स्टेट का भी नाम लिया जा रहा है। जहां उसने धमाकों की जिम्मेदारी ली है वहीं श्रीलंकाई रक्षा मंत्री कह रहे हैं कि न्यूजीलैंड की मस्जिद में हमले का आतंकियों ने बदला लिया। नेशनल तौहीद जमात को कई ताकतवर सरकारी और गैर-सरकारी माध्यमों से सैन्य, प्रशिक्षण और वित्तीय मदद मुहैया होती है जिसमें उनके हित भी जुड़े होते हैं। श्रीलंका में भीषण आतंकी हमलों के बाद उपजा आक्रोश आतंकियों द्वारा शुरू की गई लंबी लड़ाई का एक अलग अध्याय है जिसमें उन्होंने धार्मिक उन्माद फैलाने के लिए नरसंहार को अपना जरिया बनाया। चर्चों के ध्वंसावशेष और मृतकों एवं घायलों की भयावह तस्वीर में इसके संकेत स्पष्ट रूप से झलकते हैं। इन हमलों में कम से कम आठ भारतीय मारे गए हैं। हमारा दिल उनके लिए द्रवित हो रहा है, लेकिन क्या मैं इससे जुड़ा एक और सवाल भी उठा सकता हूं? आखिर हमारे दिमाग हमारे दिल की बातें क्यों नहीं सुनते? आखिर जनाजे उठने के साथ ही हम सोचना क्यों बंद कर देते हैं?

श्रीलंका में हुई इस भीषण त्रासदी को कम करके आंके बिना ही एक और बात का उल्लेख करना जरूरी हो जाता है और वह यह कि भारत भी निश्चित रूप से इन आतंकियों के निशाने पर था। हम कोई भविष्यवाणी नहीं कर सकते कि अब आगे क्या होगा। विशेषकर उन आम चुनावों के बीचोंबीच तो बिल्कुल भी नहीं जो बेहद तल्ख होने के साथ ही देश की तकदीर भी तय करने जा रहे हैं। वैसे तो आत्मतुष्टि के लिए कोई गुंजाइश नहीं है, लेकिन यह भी एकदम स्वाभाविक है कि अब भारत आतंकियों के लिए वैसा खुला मैदान नहीं रह गया जैसा कि संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन यानी संप्रग सरकार के दौरान हुआ करता था। तब हर एक दीवाली के अवसर पर हम सशंकित हो जाया करते थे। प्रत्येक शहर अति-संवेदनशील लगने लगता था। आतंकियों को लगा कि जब वर्ष 2008 में मुंबई के भयावह आतंकी हमले के बाद डॉ. मनमोहन सिंह ने कुछ नहीं किया तो कोई जवाबदेही ही नहीं होगी, मगर वे दिन दिन अब गुजर गए हैं। अब सीमा पार आतंकवाद पर जवाबदेही के लिए प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के पास राजनीतिक इच्छाशक्ति और सैन्य सामर्थ्य, दोनों हैं।

राष्ट्रीय सुरक्षा को लेकर कांग्रेस का दृष्टिकोण और भी परेशान करने वाला है। उसका चुनावी घोषणापत्र हमारी सुरक्षा और सैन्य बलों को कमजोर करता है, क्योंकि उसमें ऐसे प्रावधान हटाने की बात की गई है जो सुरक्षा और सैन्य बलों को कवच प्रदान करते हैं। अनेकता में एकता और सद्भाव में हमारा विश्वास भारत की दार्शनिक विरासत की एक अमूल्य निधि है। हम कुछ लोगों के कृत्यों पर बहुत लोगों को उसके लिए दंडित नहीं करते। हमारा दुश्मन सोचता है कि आतंक का नृशंस स्वरूप देश में सांप्रदायिक दंगे करा देगा, मगर ऐसे हर एक अवसर पर हमने माहौल भड़काकर हालात बिगाड़ने के बजाय अपने सिद्धांतों का ही पालन किया है। इससे एक और प्रश्न यह दस्तक देता है कि आखिर कांग्रेस ने एक बड़े तबके के नाम पर कुछ उपद्रवियों को लगातार संरक्षण क्यों प्रदान किया?

जरा इस पर विचार कीजिए और साथ ही यह भी सोचिए कि क्या कांग्रेस नेतृत्व खासतौर से वह जिस वर्तमान स्वरूप में दिखता है, हमारे देश को महफूज रख सकता है या फिर यहां तक कि उसकी सुरक्षा से उसका कोई सरोकार भी होगा? यह वह कांग्रेस है जो एक विश्वविद्यालय परिसर में भारत के टुकड़े-टुकड़े करने का नारा लगाने वालों की पीठ थपथपा कर उनकी मदद के लिए आगे आती है।

एक बड़े समुदाय के कुछ गुमराह लोगों द्वारा जो उग्र जिहाद छेड़ा गया है उसने श्रीलंका को अपनी लड़ाई का अखाड़ा बना लिया है। इसके लिए श्रीलंका को किसी तात्कालिक नहीं, बल्कि सोची-समझी साजिश के तहत चुना गया है। जिहादी समूहों की रणनीति में एक खास पहलू शामिल रहा है। वे वहीं हमला करते हैं जहां उसकी सबसे कम उम्मीद होती है। उनकी बर्बरता की कोई भौगोलिक सीमा नहीं। असल में कुछ दोष हमारी स्मृति का भी है जो हादसों को भुला देती है। हमने विस्मृत कर दिया कि पाकिस्तानी आतंकी समूहों ने कैसे लाहौर में श्रीलंकाई क्रिकेट टीम पर हमला किया। अफसोस की बात यही है कि कोलंबो ने इस हमले को एक राष्ट्रीय आपदा की आशंका के तौर पर नहीं लिया। इस वजह को केवल तुष्टीकरण के रूप में ही देखा जा सकता है। अब हमें यही देखना होगा कि वर्ष 2019 में आगे क्या होगा? आतंकी दुनिया का एक ही दस्तूर है कि जो जिहाद के साथ नहीं वे सब उनके दुश्मन हैं। यहां तक कि अपनी मदद करने वालों को भी ये जिहादी बख्शते नहीं। उनके मददगार अगर उनसे सतर्क नहीं तो वे भी उनकी भेंट चढ़ सकते हैं। भारत की एकता, सुरक्षा और समृद्धि इसी पर निर्भर है कि हम हत्यारों से खुद को कैसे बचा सकते हैं? हम एक ऐसे मुकाबले के बीच में हैं जिसमें हम फंसना नहीं चाहते। ऐसी स्थिति में जीत के लिए हमें एक ऐसे नेता की दरकार है जो निगरानी में मुस्तैद होने के साथ ही जवाबी हमला करने में सक्षम हो।

(लेखक पूर्व केंद्रीय मंत्री एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

अवधेश राजपूत

चलन से बाहर बुनियादी मुद्दे

डॉ. बृजेश

जाति-मजहब की राजनीति के चलते ही शिक्षा, स्वास्थ्य, बेरोजगारी जैसे असली मुद्दे चुनावी चर्चा से बाहर हैं

देश में वोट की राजनीति में केवल तीन अहम पैमाने नजर आते हैं। पहला जाति, दूसरा मजहब, तीसरा सरकार से मोह भंग यानी एंटी इनकंबैंसी। हिंदुस्तान की सियासत इन तीन मुद्दों पर टिकी है। जाति जन्म से है जिसे बदला नहीं जा सकता। प्रजातंत्र संख्या का खेल है। जिसकी जितनी संख्या भारी उतनी उसकी भागीदारी जैसे नारों ने भारतीय राजनीति में जातीय गणना को सर्वोपरि कर दिया है। इतिहास के प्रतीकों को जातियां अपने-अपने राजनीतिक हितों की खातिर महिमामंडित करने लगी हैं। सभी दल अब चुनाव में जातियों का गणित बिठाने लगे हैं। मतदाता भी बेरोजगारी, महंगाई, शिक्षा, स्वास्थ्य संबंधी मुद्दे भूलकर जातिगत स्वार्थ में फंसकर मतदान करते हैं। इस यथार्थ को शुरू में डॉ. राममनोहर लोहिया ने पकड़ा। शुरुआती चुनावों में लोहिया की पार्टी की करारी हार ने उन्हें कांग्रेस के मुकाबले अपना जनाधार वोट बनाने को बाध्य किया। उनके जाति तोड़ो, दाम बांधो, सस्ता उपचार, मुफ्त शिक्षा, अंग्रेजी हटाओ जैसे आंदोलनों ने राजनीतिक कार्यकर्ता तो पैदा किए, लेकिन चुनाव नहीं जीत पाए। राष्ट्रीय आंदोलन से उपजे जनाधार (मूलतः ब्राह्मण-हरिजन-अल्पसंख्यक) के बल पर कांग्रेस चुनाव जीतकर सत्ता पर काबिज रही। लोहिया ने लगातार पराजय झेलते हुए यह महसूस किया कि मतदाता बेरोजगारी, महंगाई, शिक्षा, स्वास्थ्य इत्यादि मुद्दे भूलकर, जातिगत स्वार्थ में फंसकर मतदान करता है।

उन्होंने कांग्रेस के विकल्प में नारा दिया-संसोपा ने बांधी गांठ, पिछड़ें पावे सौ में साठ। इस तरह उन्होंने पिछड़ी जातियों को जोड़ा, हालांकि उन्होंने आगाह किया था कि इसका जाति विशेष के पक्ष में ध्रुवीकरण होने का भय है, जो आगे सही साबित हुआ। उन्होंने रामसेवक यादव, कर्पूरी ठाकुर, मनीराम बागड़ी, सत्यनारायण रेड्डी, रविराय, बेनीप्रसाद वर्मा, धनिकलाल मंडल, उपेंद्र नाथ वर्मा, पुरुषोत्तम कौशिक, बृजलाल वर्मा, चिमनलाल शाह, रविनारायण परमार इत्यादि नेताओं को चुनाव में उतारकर पिछड़ी जातियों को जोड़ा। इससे उनकी पार्टी जीतने लगी। अनेक प्रांतों में संविंद सरकारें बनी। लोहिया की आकस्मिक मृत्यु के बाद उनके आंदोलन से उपजी जनचेतना को चौधरी चरण सिंह ने अपना सियासी हथियार बनाया और पिछड़ी जातियों-मूलतः किसान जातियों का प्रतिनिधि बन प्रधानमंत्री पद हासिल किया। फिर मंडल कमीशन की सिफारिशें लागू होने के बाद जातियां अपनी-अपनी संख्या के आधार पर राजनीतिक छावनियों में संगठित होने लगीं और चुनावी समर में अपनी हिस्सेदारी की दावेदारी करने लगीं। इसी के चलते दस्यु सुंदरी फूलन देवी का लोकसभा में पहुंचना संभव हुआ। जब लोहिया जाति की बात करते थे तो वामपंथी उसे नकारते थे। खांटी कम्युनिस्ट नेता मित्रसेन यादव भी सामाजिक न्याय के रास्ते मुलायम सिंह की पार्टी में शामिल हो गए। वामपंथी इस हृदय परिवर्तन को समझ नहीं पाए। एक समय बिहार, उप्र, पंजाब आदि से कई वामपंथी सांसद चुने जाते थे। जातिवादी राजनीति के चलते वामपंथी अपना अस्तित्व खो बैठे। बिहार में महागठबंधन ने उन्हें अप्रासंगिक मानकर अपने साथ जोड़ा ही नहीं।

दूसरा महत्वपूर्ण अंश है मजहब। धार्मिकता के नाम पर पार्टी विशेष या प्रत्याशी विशेष के लिए ध्रुवीकरण किया जाता है। प्रथम आम चुनाव में समाजवादी नेता आचार्य नरेंद्र देव जब अयोध्या से लोकसभा के प्रत्याशी थे तो कांग्रेस ने बाबा राघवदास को उनके विरुद्ध खड़ा कर दिया। ध्रुवीकरण से उन्होंने आचार्य जी को पराजित किया। जवाहरलाल नेहरू भी चुनावों के लिए पंडित नेहरू बन गए थे। हिंदूवादी तत्वों के चलते अल्पसंख्यकों का ध्रुवीकरण होता है और जातिवादी नेता उन्हें अपने सियासी हितों के पोषण के लिए बनाए रखते हैं। कहीं एमवाई यानी मुस्लिम-यादव समीकरण बनता है तो कहीं जाट-मुस्लिम समीकरण। दक्षिण में वोक्कालिंगा-मुस्लिम समीकरण के चलते घोर जातिवादी नेतृत्व उभर आया है। समय के साथ सामाजिक न्याय के पुरोधा अपनी जाति और फिर परिवार के पोषक बन गए और अल्पसंख्यक समाज अपने ध्रुवीकरण के चलते जातिवादी एवं परिवारवादी नेताओं की राजनीति के चंगुल में फंसकर रह गया। इसके चलते वह अपने बुनियादी मुद्दों से निष्प्रभावी बना रहा।

तीसरा मुद्दा है चुनावी वादे और उनकी उपेक्षा से स्थापित सरकार से मोहभंग। 1977 में जनता पार्टी को अप्रत्याशित जीत मिली थी, लेकिन छह महीने बाद आजमगढ़ उपचुनाव में कांग्रेस प्रत्याशी मोहसिना किदवई जीत गईं। हाल में मप्र, राजस्थान, छत्तीसगढ़ विधानसभा चुनावों में कांग्रेस को मिली सफलता स्थापित सरकारों से मोहभंग का परिणाम है। यह मुद्दा प्रायः जनमानस को बुनियादी सवालों पर चर्चा के लिए प्रेरित करता है। जैसे बेरोजगारी, विकास, कानून व्यवस्था, शिक्षा, स्वास्थ्य, महंगाई, भ्रष्टाचार इत्यादि। अफसोस है कि ज्यादातर मतदाता जाति और मजहब के चलते इन पर ध्यान नहीं दे पाते। अल्पसंख्यक समाज अपनी गरीबी, बेरोजगारी, शासन-प्रशासन में भागीदारी, अशिक्षा, स्वास्थ्य, कानून व्यवस्था पर वोट नहीं करता। वह मजहब के मठाधीशों के प्रभाव में आकर जातिवादी या फिर परिवारवादी नेताओं के चंगुल में फंसा रहता है। अब चुनावों में जन धारणा की महत्वपूर्ण भुमिका होती है। प्रिंट मीडिया के साथ बीते कुछ वर्षों से टीवी, सोशल मीडिया जन धारणा बनाने का काम करता है। यह नया मीडिया तंत्र पूरे समाज पर अपनी प्रायोजित अवधारणा को थोपने का काम करता है। इस नए मीडिया तंत्र की ओर से कोई भी मुद्दा उछाल दिया जाता है और जनता उसी में उलझकर रह जाती है। सोशल मीडिया तो इतिहास में दफन हुए मुद्दों को पुनः उजागर करने का भी काम करता है।

2014 में भाजपा को मिली अभूतपूर्व सफलता ने उसे एक अवसर दिया था कि वह अपने शासन में अल्पसंख्यकों को भयमुक्त करती और देश में धार्मिक भाईचारा स्थापित करती। अफसोस कि ऐसा नहीं हो पाया। लव जिहाद, गोकशी जैसे मुद्दे उठे। इससे अल्पसंख्यक समाज सशंकित हुआ और उसने परिवारवादी, जातिवादी दलों की शरण में जाना बेहतर समझा। वह शासन-प्रशासन में प्रतिनिधित्व, गरीबी इत्यादि को मुद्दा नहीं बना सका। यदि वर्तमान सरकार ने अपने संगठनों को शुद्ध मन से स्वच्छता, बेटी बचाओ, कौशल विकास इत्यादि राष्ट्रीय कार्यक्रमों से जोड़ा होता और देश में सौहार्द को बल दिया होता तो सबका साथ-सबका विकास का नारा सर्वग्राही बन जाता और जातिवादी एवं परिवारवादी राजनीति भी निष्प्रभावी हो जाती। इसके फलस्वरूप आम चुनाव विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, भ्रष्टाचार से मुक्ति इत्यादि सवालों पर केंद्रित होता।

(लेखक डब्ल्यूएचओ के दक्षिण एशिया नेटवर्क से संबद्ध हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

बुद्धि

इस धरा पर मनुष्य सबसे सर्वश्रेष्ठ है। इसकी वजह यही है कि सिर्फ उसके पास बुद्धि बल है जिससे वह असंभव को भी संभव बना सकता है। मनुष्य की बुद्धि का ही कमाल है कि उसने नई-नई खोज करके मानव सभ्यता को श्रेष्ठतम ऊंचाइयों तक पहुंचा दिया। मनुष्य ने ऐसी-ऐसी चीजें विकसित कर दीं, जो कभी असंभव-सी लगती थीं। बुद्धि के कारण ही मनुष्य-मनुष्य के बीच भी भेद है। यानी जो व्यक्ति अपने बुद्धि बल का जितना ज्यादा इस्तेमाल करता है, वह उतना अधिक प्राप्त करता है। मनुष्य अपनी बुद्धि की तीव्रता एवं सूक्ष्मता को अपने पुरुषार्थ से बढ़ा सकता है। मनुष्य की बुद्धि को न कोई चुरा सकता है और न ही कोई उसे छीन सकता है। बाकायदा बुद्धि ही मनुष्य के पास ऐसा धन है, जिसे बांटने पर यह बढ़ती जाती है। जो व्यक्ति अपने अर्जित किए गए ज्ञान को दूसरों के साथ नहीं बांटता है, उसकी बुद्धि सीमित होती जाती है। इसी प्रकार जो व्यक्ति अपनी बुद्धि का इस्तेमाल नहीं करता, वह हमेशा कष्टों में रहता है। अपनी बुद्धि के कारण मनुष्य कठिन विषयों को सरलता से समझ पाता है।

बुद्धि बल से मनुष्य में सत्य-असत्य को जानने की क्षमता रहती है और उसके मन में किसी प्रकार का संदेह नहीं रहता। बुद्धि के द्वारा व्यक्ति अपना, अपने समाज और राष्ट्र का कल्याण कर सकता है। चाणक्य का कहना है कि जिसके पास बुद्धि है, उसके पास हर प्रकार का बल है। बुद्धि बल से मनुष्य कठिन परिस्थितियों में भी अपना हौसला बनाए रखता है और अपनी रक्षा कर लेता है। बुद्धि बल ही मनुष्य को ख्याति दिलाता है और यदि मनुष्य की बुद्धि भ्रष्ट हो जाए तो यही उसके विनाश का कारण भी बन जाती है। बुद्धि से मनुष्य में विवेक आ जाता है, जिससे वह सही-गलत का निर्णय कर सकता है। जबकि बुद्धि भ्रष्ट हो जाने पर व्यक्ति अपना भला-बुरा नहीं सोच पाता। गीता में कहा गया है, विषयों का चिंतन करने वाले मनुष्यों की उन्हीं विषयों में आसक्ति हो जाती है। आसक्ति से उन विषयों की कामना उत्पन्न होती है और कामना में विघ्न पड़ने पर क्रोध उत्पन्न होता है। क्रोध से मूढ़ता उत्पन्न होती है यानी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। बुद्धि भ्रष्ट होने से स्मरण विलुप्त हो जाता है। अर्थात ज्ञान शक्ति का नाश हो जाता है और बुद्धि अथवा स्मृति के विनाश होने पर सब कुछ नष्ट हो जाता है।

महायोगी पायलट बाबा

वर्षाजल के संरक्षण का सवाल

सुधीर कुमार

भारत में मानसूनी वर्षा खेतों में पानी की आवश्यकता को पूरा करने के अलावा भू-जल स्तर को भी बढ़ाती है

भारतीय मौसम विभाग ने इस साल मानसून के सामान्य रहने की भविष्यवाणी की है। विभाग के मुताबिक इस वर्ष मानसूनी वर्षा 96 फीसद तक हो सकती है। इस लिहाज से देखा जाए तो आने वाले समय में मानसूनी वर्षा चार महीने (जून-सितंबर) तक देशवासियों पर राहत की फुहारें बरसाने वाली है। भारत में मानसून का आगमन अमूमन 1 जून को होता है जब आर्द्रता से लबरेज दक्षिणी-पश्चिमी मानसूनी हवाएं केरल के समुद्री तट को भींगोते हुए देश के विभिन्न हिस्सों की ओर आगे बढ़ती हैं। मानसून का आगमन देशवासियों में हर्ष और ऊर्जा का संचार करता है। भीषण गर्मी और पेयजल संकट से जूझती जनसंख्या को जहां इससे राहत की उम्मीद है, वहीं देश के किसान वर्ग ने इस बार बंपर पैदावार की सकारात्मक उम्मीद लगानी शुरू कर दी है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहां की कृषि मुख्यतः मानसून पर ही निर्भर है। मानसूनी वर्षा खेतों में पानी की आवश्यकता को पूरा करने के अलावा भू-जल स्तर को भी बढ़ाती है। देश में जिस वर्ष मानसूनी वर्षा झमाझम होती है, उस वर्ष खेत नाना प्रकार के फसलों से लहलहा उठते हैं, जबकि अनियमित एवं अनिश्चित मानसून की स्थिति देश में खाद्यान्न एवं जल संकट उत्पन्न करती है। मानसूनी फुहारें हर वर्ष जानलेवा साबित होती गर्मी से देशवासियों को राहत देने के अलावी मौसम का मिजाज बदलने में भी प्रभावी भूमिका निभाती हैं। किंतु यहां सवाल यह भी है कि क्या हम वर्षा द्वारा प्राप्त अतिरिक्त जल को संरक्षित कर पाएंगे? आमतौर पर देश में वर्षाजल का मात्र 35 फीसद हिस्सा ही खेतों और जलस्रोतों में प्रवेश कर पाता है, जबकि 65 फीसद हिस्सा बिना समुचित इस्तेमाल के समुद्र में प्रवेश कर जाता है। व्यर्थ हो रहे इस जल को हमें रोकना होगा। पर कैसे? नदियां, तलैया और तालाब गाद-मलबों से भरे पड़े हैं। नालियां गंदगी से बजबजा रही हैं, जो अत्यधिक वर्षा के बाद ढेरों समस्याओं को जन्म देंगी। वहीं अत्यधिक वर्षा बाढ़ और भूस्खलन जैसी आपदाओं को आमंत्रण देती है। क्या इससे निपटने की हमारी तैयारी पूरी है?

देश में ठोस जल नीति के अभाव में प्रतिवर्ष जल का एक बड़ा हिस्सा व्यर्थ हो जाता है। दरअसल शिक्षा के प्रचार-प्रसार में तेजी आने के बावजूद लोग जल संरक्षण के प्रति जागरूक नहीं हैं। जल संरक्षण के तमाम तरीके केवल विज्ञापन और भाषणबाजी तक ही सिमट कर रह गए हैं। हड़प्पा सभ्यता से ही देश में कुओं और तालाबों की खुदाई कर हमारे पूर्वजों ने जल संरक्षण पर ध्यान दिया है, लेकिन तथाकथित औद्योगिक एवं आधुनिक होते वर्तमान समाज में जल संरक्षण के परंपरागत तरीके भूला दिए गए, जो जल संकट के व्यापक होने का अहम कारण है। आज देश में प्राचीन तालाब संस्कृति को पुनर्जीवित किए जाने की जरूरत है। तालाब, कुआं और तलैया वर्षा जल का संग्रहण कर भूजल स्तर को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वर्षा ऋतु से पूर्व इसमें समाहित गाद-मलबों की अच्छी तरह सफाई की जानी चाहिए। भूजल पुनर्भरण का मुख्य स्रोत बारिश है। जब तक बारिश का पानी धरा पर ठहरेगा नहीं तो भविष्य में हम उसका प्रयोग कैसे कर पाएंगे?

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

लोकतांत्रिक मर्यादा का हनन

संजय गुप्त ने 21 अप्रैल को लिखे अपने आलेख 'फिर सतह पर जाति-मजहब की राजनीति' में वर्तमान आम चुनाव की जिस वास्तविकता को बयां किया है, वह न केवल लोकतांत्रिक मर्यादाओं का हनन है अपितु लोकतंत्र की उस अवधारणा की भी अनदेखी है जिसमें जनता का, जनता के लिए, जनता द्वारा किए जाने वाले शासन हेतु लोकतांत्रिक चुनाव की व्यवस्था की गई है। वस्तुतः इस तरह के चुनाव में जाति, संप्रदाय और भाई-भतीजावाद से परे होकर सर्वाधिक उपयुक्त प्रत्याशी का चयन करना ही लोकतांत्रिक मर्यादा है। जिसका चीर-हरण आज न केवल मतदाताओं द्वारा किया जा रहा है अपितु विभिन्न राजनीतिक दलों के प्रमुख नेता और उनके प्रत्याशी भी इसको धार देकर लोकतांत्रिक मर्यादा को तार-तार कर रहे हैं, जो भारतीय लोकतंत्र के लिए शुभ नहीं है। इस मर्यादा हनन की पराकाष्ठा ये है कि अब चुनावी प्रत्याशी अपनी प्रतिद्वंद्वी महिला प्रत्याशी के प्रति हद दर्जे की बदजुबानी करने से भी बाज नहीं आ रहे। भारतीय लोकतंत्र के संसदीय प्रमुख और देश के प्रधानमंत्री को जब प्रमुख विपक्षी नेता बिना वजह 'चोर' बताने लगे तो इससे अधिक अमर्यादित बात और क्या हो सकती है? लेकिन इस देश में लोकतंत्र को विरूपित करने वाला यह अमर्यादित आचरण बेखटके किया जा रहा है। देश की जनता भी नेताओं की इस बदजुबानी को चुनावी झलकियां मानकर नजरअंदाज कर रही है, जो कि कतई उचित नहीं है। यदि एक बार जनता द्वारा इन बदमिजाज नेताओं का सार्वजनिक रूप से बहिष्कार कर दिया जाए तो इन्हें अपनी गलती का अहसास हो जाएगा। लेकिन जाति-मजहब के चुनावी मकड़जाल में फंसी आम जनता के लिए ऐसा कर पाना मुश्किल है। ऐसे में इसका सटीक इलाज चुनाव आयोग को संवैधानिक रूप से शक्ति संपन्न बनाकर किया जा सकता है। लेकिन अपनी सुविधा के लिए इन राजनेताओं ने चुनाव आयोग को पूर्ण सक्षम बनाने की बात कभी नहीं की। जिसका खामियाजा आज देश का लोकतंत्र भुगत रहा है।

pandeyvp1960@gmail.com

जेट एयरवेज का संकट

करीब ढाई दशक पहले शुरू हुई भारतीय विमानन कंपनी जेट एयरवेज पर संकट गहराता ही जा रहा है। आलम यह है कि कंपनी को हाल ही में अपनी सभी उड़ानें अस्थाई रूप से बंद करनी पड़ीं। यह कदम तब उठाना पड़ा जब ऋणदाताओं के समूह ने कंपनी को 400 करोड़ रुपये का कर्ज देने से मना कर दिया। इन सब के बीच बड़ा सवाल यह है कि विमानन उद्योग में प्रतिवर्ष 24 प्रतिशत की बढ़ोतरी के बावजूद यह संकट क्यों पैदा हुआ? मात्र जेट ही नहीं, बल्कि एअर इंडिया, विस्तारा जैसी कंपनियां भी कड़े वित्तीय संकट के दौर से गुजर रही हैं। जानकारों की मानें तो कड़ी प्रतिस्पर्धा के दौर में सस्ते और आकर्षक किराये की होड़ कंपनियों पर भारी पड़ रही है। ज्यादा उड़ानों के चलते, सभी सीटों के भरने के उद्देश्य से किराये में कटौती कंपनियों की मजबूरी हो गई है और यह उनकी कमर तोड़ दे रहा है। दूसरी सबसे बड़ी वजह ऊंची कीमतों पर मिलने वाला विमान का ईंधन और उस पर भारत में लगने वाला भारी भरकम टैक्स कंपनियों के लिए परेशानी का सबब बना हुआ है। साथ ही अंतरराष्ट्रीय पैमाने पर विमान कर्मचारियों का वेतन, उच्च एअर पोर्ट शुल्क, प्रबंधन द्वारा सही नियामन न होना आदि ऐसे कारण हैं जो कंपनियों को वित्तीय संकट में धकेल रहे हैं। अब सवाल है कि इसमें सरकार कहां खड़ी है। हम इन्कार नहीं कर सकते कि बीते वर्षों में मोदी सरकार ने विमानन क्षेत्र के लिए कुछ नहीं किया, पर वो यात्रियों के लिए था उसमें विमानन कंपनियों के कुछ खास नहीं था। अंततः बढ़ते विमानन बाजार के आकार को सही दिशा देने के लिए एक ठोस और दूरदर्शी नीति की जरूरत है।

संजय दुबे, नई दिल्ली

सराहनीय कार्य

व्यापार की आड़ में मौत के साजो सामान भेजना पाकिस्तान की आंतकी, विकृत मानसिकता का खुला प्रमाण है। भले ही देर से सही, सही समय पर पाकिस्तान से व्यापार पर प्रतिबंध लगाकर भारत सरकार ने सराहनीय कार्य किया है। अब पाकिस्तान के साथ किसी भी प्रकार की हमदर्दी दिखाने की कतई जरूरत नहीं है, क्योंकि यह देश किसी भी दृष्टि से हमदर्दी लायक नहीं है। पाकिस्तान से हमारे देश के लिए कितनी ही जरूरत वाली चीजें क्यों न आती हों, उसके बगैर रहने की आदत डाल लेंगे, मगर इस अधमी राष्ट्र से किसी प्रकार का व्यापार नहीं करना चाहिए।

hemahariupadhyay@gmail.com

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 23359961-62, नोएडा कार्यालय : 0120-3915800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।